प्रज्ञा से प्रखर दादी ने पूरा किया जीवन का सौवां सफ़र

कहा जाता है ज़िन्दगी का सफ़र अगर यूं ही कट जाये तो लोग उसे अप्रतिम नहीं मानते, कहते, कुछ तो विशेष करते ज़िन्दगी में जिसे सभी अपनी यादों में समा लेते। बस कुछ ऐसा विवरण, एक ऐसा वृत्तांत जो मर्मस्पर्शी है, दिल को अह्लादित करने वाला है और कुछ ऐसा सिखा जाने वाला है जो जीवन को सुखदायी बना जायेगा।

मानव का सम्पूर्ण चरित्र उसके कर्मों और उसके संस्कारों से गढ़ा जाता है। कर्मों का बीज संस्कार है और संस्कारों का बीज संकल्प है। बस उन्हीं संकल्पों को जिसने शिरोधार्य किया उसी महान हस्ती का नाम राजयोगिनी दादी जानकी है। आपने अपने संकल्पों के माध्यम से अपने जीवन को सबके लिए आदर्श बनाया। आपने वो कर दिखाया जो एक साधारण मानव को सोचना भी दूभर लगे, एक आईना हैं आप इस संसार के लिए। आज हर दिल की चहेती बनी दादी जानकी जी ने अपनी आध्यात्मिक यात्रा के सफलतम सौ वर्ष पूरे कर लिए हैं। भक्ति भाव से भरी, दादी जानकी जी इस ज्ञान में आने से पहले वो सब कुछ करती थीं जो एक नौधा भक्ति करने वाला करता है। एक चाह थी, एक खोज थी, एक तलाश थी उसे पाने की जिसे गुफाओं, कन्दराओं में हज़ारों वर्ष तपस्या करने के बाद भी कोई मनीषी वहां तक पहुंच नहीं पाया। दादी जानकी ने अपने जीवन को उस पथ पर पूर्णतया समर्पित कर दिया और उसे ढूंढ़ के ही दम लिया। आज वो दिलाराम परमात्मा शिव निराकार दादी के साथ खेलते हैं, उन्हें पुचकारते हैं, प्यार करते हैं, बहलाते हैं। आज अपने मोहपाश में दादी ने परमात्मा को बांध रखा है। आप सोच सकते हैं कि कितनी शक्तिशाली होंगी हमारी दादी।

- ब्र. कु. गंगाधर

दादी से मिलने व बात करने से पता चलता है कि दादी जी के मन में बचपन से ही दूसरों के जीवन को सुखी बनाने की प्रेरणा आती रहती थी। आध्यात्मिक यात्रा के प्रारम्भिक चरण में आप शारीरिक व्याधियों से ग्रस्त रहीं, फिर भी आपने इस पथ पर अपनी भूमिका को परमात्मा की प्रेरणा के आधार से बखूबी निभाया। यज्ञ इतिहास में यह बात आती है कि दादी जी को सेवा भी ऐसी मिली थी जिसे सभी लोग नहीं कर सकते थे। वो हमेशा यज्ञ में आये हुए यज्ञ वत्सों की व्याधियों को ठीक करने तथा उन्हें सेवा देने का काम करती थीं। बीमारी आदि से ग्रस्त भाई-बहनों की नर्स के रूप में आपने खूब सेवा की और वह उस समय की थी जब आप खुद शारीरिक रूप से स्वस्थ नहीं थीं।

दादी जी एक प्रखर प्रज्ञा

क्या भाषा बाधा हो सकती है हमारे प्रगति में? शायद नहीं, वो इसलिए क्योंकि दुनिया में लोग भाव को महत्व ज़्यादा देते हैं, भाषा को नहीं। प्रखर प्रज्ञा के रूप में जानी जाने वाली हमारी दादी इसका एक मिसाल हैं जिन्होंने विदेशी भाषा को न जानने के बावजूद भी अपनी योग शक्ति व परमात्म बल से विदेशी जनों को भी अपना बनाया और ऐसा बनाया कि आज विदेश के सभी प्रबुद्ध जन दादी जी के एक-एक महावाक्य को अपने लिए प्रगति की सीढ़ी मानते हैं। लौकिक शिक्षा दादी जी की बहुत कम रही है परन्तु अपनी चौदह वर्षों की तपस्या के बल से उन्होंने आध्यात्मिक शिक्षा को अपने अंग-अंग में उतारा।

विभिन्न भाषाओं के बीच बोया आध्यात्मिकता का बीज

राजयोगिनी दादी जानकी की मेधा शक्ति की प्रबलता का आंकलन, हम उनके सभी के मनोभावों को पढ़ने के तरीके से लगा सकते हैं। आध्यात्मिकता के बल से आपने विदेशी संस्कृति के लोगों पर अलग छाप छोड़ी। दादी जी संस्थान की ओर से 1970 में पहली बार विदेश सेवा हेतु लन्दन गईं और वहां पर सबके मनोभावों को पढ़ लोगों के अन्दर मानवीय मूल्यों का बीजारोपण किया। विदेशी संस्कृति के लोग भी इन मानवीय मूल्यों को अपनाने में खुशी महसूस करते थे। इसका उदाहरण व परिणाम यह है कि लगभग 140 देशों में आध्यात्मिक मानवीय मूल्यों का संचार हो चुका है। मूल्यनिष्ठ समाज की स्थापना - शेष पेज 8 पर

सब के साथ रहते जो 'अंतर्मुखी' वो ही सदा सुखी

बाबा बहुत अच्छा है, क्यों? हमारा बाप टीचर बन गया, कल बोला विचार सागर मंथन करो, आज बोला बुद्धि को सतोप्रधान बनाओ। कभी कुछ, कभी कुछ बाबा ऐसा बताता है ताकि हम बिज़ी रहें, अच्छे-से-अच्छे ज्ञान को धारण करें। अनहोनी बात, इम्पॉसिबल बात को बाबा पॉसिबल कर देता है इसलिए बहुत अच्छा बाबा है।

सिम्पल बात को बड़ी बात नहीं बनाओ। बड़ी को छोटी बना दो तो दोष नहीं है और औरों का दोष निकालके छोटी को बड़ा बनाया तो मेरा दोष हो जायेगा। ऐसा यह क्यों करता? सम्भलके बोल, यह सोचो भी नहीं, मुख से नहीं बोलो। यह वर्ड्स मुख से निकलता है, विज़डम कैसी है, कितनी है, अंदर से दिखाई पड़ता है। अंदर के चेहरे से दिखाई देता है। इसलिए बुद्धि को सतोगुणी से सतोप्रधान बना दो। थोड़ा भी सोचने, बोलने में एक्यूरेट नहीं है तो बाबा देखेगा मैं कुछ और चाहता हूँ यह करता कुछ और है।

मुख से शब्द ऐसे निकलें जो 20 साल पहले वाले शब्द भी याद आवें तो खुशी की आवाज़ निकले क्योंकि संगमयुग के समय का बहुत महत्व है। जितनी पढ़ाई उतनी कमाई। अंदर संकल्प की जो शुद्धि है ना, वह औषधि है। यह औषधि जो जितना यूज़ करता है उसके लिए उतना अच्छा होगा। अंत मते तक बाप, टीचर, सतगुरु तीनों को खुश करना है तो धर्मराज को भी खुश करो। मेरे से तीनों खुश हैं, यही विज़डम है। तीनों को खुश करना माना धर्मराज को खुश करना। है रूप तीन ही लेकिन उसके अंदर में धर्मराज छिपके ऐसा बैठा है, अभी-अभी सुबह शाम हरेक देखे, मेरी खुशी गुम क्यों हुई? धर्मराज ने सजा दी। अभी देता है थोड़ा कान पकड़के सावधान करने के लिए, जो बाबा ने कहा था मुरली सुनते समय अगर बुद्धि इधर-उधर गयी तो योग नहीं है। देखा जाता है सुनता यहाँ है, पर बुद्धि बाहर है तो बात अंदर नहीं गयी इसलिए बाहर में सबके साथ रहते हुए भी अंतर्मुखी है तो वो सदा सुखी है। मेरे संग सेवा करने वाले भी सुखी हों।

तो विज़डम बाबा की है, सुनने वाले आप हैं, अगर आप न सुनते तो मैं कोई काम की नहीं होती। अपनी बुद्धि को अभिमान से फ्री रखो। अपमान की फीलिंग न आवे, यह मंज़िल ऊँची है, जाना ज़रूर है। तो ऊँचे कैसे जायेंगे! सारा दिन ऐसे करूँ, नहीं। ऐसे करने से... एक घण्टा सुनने के साथ-साथ सुख-शांति-प्रेम जितना खींचना हो खींचे, फिर रात को घर में नींद न आये भले, क्या सुना-क्या सुना...तो अनुभव ज़्यादा होगा। शब्द किसको न भी याद आये, इसलिए भगवान के महावाक्य हैं, डिवाइन विज़डम, डिवाइन इनसाइट, दिव्य बुद्धि दिव्य दृष्टि, यह सुनने के बाद रिपीट करने से और गहरा होता जाता है।

हर कार्य में निश्चय से विजय हुई है, यह हम देखते आ रहे हैं इसलिए बाबा हर बात की गहराई में ले जाता है। दुनिया में कितनी गंदगी, कितना फैशन, क्या खाना पीना... नशे में धूत रहते हैं। हमारे यहाँ इतने पढ़ने आते फ्री ऑफ चार्ज। सवेरे-सवेरे उठके स्नान पानी करके अमृतवेले क्लास में हाज़िर हो जाते हैं। वैसे माया बड़ा धक्का खिलाती है, तरस पड़ता है। अभी हम सब मिल करके उस पार जा रहे हैं। मेरे यूनिवर्सिटी के स्टूडेंट्स यहाँ बूढ़े जवान इकट्ठे पढ़ते हैं, इसका उदाहरण सभा में देख सकते हैं। ऐसी यूनिवर्सिटी तो सारे कल्प में नहीं देखी। योग लगाते जाओ, सहयोगी बनते जाओ और सहयोगी बनाते जाओ और योगी बना दो तो यही तो सेवा है। सिर्फ बाबा को जानो, अपने को पहचानो।

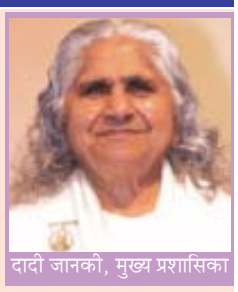

दादी जानकी, मुख्य प्रशासिका

कई हैं जो अभी भी अपने को नहीं पहचानते हैं और एक दो को भी जानें इसमें धीरज चाहिए। रूहानियत चाहिए, मैं एक दो को पहचानूँ, बाबा को पहचानना तो ईज़ी था क्योंकि डायरेक्ट योग लगाया, थोड़ा सुख शान्ति मिला पर इसमें मुझे क्या मिलेगा? ज़रूरी क्या है? व्यवहार और सम्बन्ध में जब आते हैं तब एक-दो को पहचानने से नम्बर मिलता है। वो विज़डम कहाँ तक किसमें है, मिल करके रहने की या मिलाने की। जो मिल करके रहता है वो मिलाने के बिगर चल नहीं सकता है, उसको अनुभव है। उसको कभी दूरबाज खुशबाज का ख्याल नहीं आयेगा। इस ख्याल से जो फ्री हुआ, बाबा उनसे अनेक काम करा लेता है। यह बाबा ने आज दिन तक कराया है। तो मैं कहती हूँ जितना बाबा को अपना बनाओ, तो बाबा भी मुझे अपना बनाके हर कार्य कराता है। फिर हर कार्य करते, सम्बन्ध में रहते भी मुस्करा सकते हैं। फिर बाबा बहुत खुश हो जाता है क्योंकि बाबा को ऐसे बच्चे चाहिए।

विशेषताएं तो प्रभु की देन हैं, प्रभु प्रसाद हैं, उसे मेरा न कहें

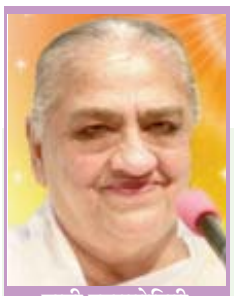

दादी हृदयमोहिनी
अति.मुख्य प्रशासिका

समस्याएं या संस्कार - यह दो प्रकार की बातें हर आत्मा के सम्मुख आती हैं। लेकिन बातें व समस्याएं या परिस्थितियां हमारी स्वस्थिति के आगे कुछ नहीं हैं। कहा ही जाता है, पर-स्थिति यानि दूसरे की तरफ से आई हुई स्थिति, स्व नहीं है। तो स्व माना मैं आत्मा, तो उसकी ताकत ज़्यादा है या पर स्थिति की ताकत ज़्यादा है? लेकिन ज़रा भी अटेंशन कम होगा तो अलबेलापन व आलस्य आना शुरु होगा तो उसका प्रभाव पड़ जायेगा। हम जितना आगे बढ़ते हैं, ज्ञान-योग में उन्नति करते हैं, उतना माया भी ट्रायल करती है क्योंकि माया समझती है कि यह 63 जन्म हमारे ही तो थे। तो जितना-जितना महारथी बनते हैं, उतना अभिमान जल्दी आता है, देह अभिमान वाला अभिमान नहीं, लेकिन अपनी सेवा की विशेषता का, अपनी प्रोग्रेस का अभिमान सूक्ष्म में आ जाता है। जब यह अभिमान आता है तो उनके सोचने का ढंग ही चेंज हो जाता है। उनके दृष्टिकोण में परिवर्तन आ जाता है। तो कोई भी अभिमान हो, वह आया तो उसकी निशानी है, आपको अपमान बहुत जल्दी फील होगा। थोड़ा भी कोई कुछ ऊपर-नीचे करेंगे तो आपको अपमान लगेगा। इसीलिए इसकी सम्भाल बहुत रखना है। आगे बढ़ना बहुत अच्छा है और बढ़ना ही चाहिए। लेकिन भिन्न-भिन्न अभिमान से सम्भाल रखते आगे बढ़ते रहें तो अच्छा है।

तो जो अपनी विशेषता प्रैक्टिकल में होती है उसी का अभिमान आ सकता है इसलिए इसके प्रति बड़ा सावधान हो रहना चाहिए। वह विशेषता बाबा के ज्ञान में आने से ही आई होगी, पहले तो थी नहीं, तो यह प्रभु की देन है। प्रभु प्रसाद है। प्रसाद को मेरा कहना भी रांग होता है। तो हमारे में जो भी विशेषताएं हैं, यह प्रभु प्रसाद हैं, यह प्रभु की देन हैं। अभी इसमें भी हम अभिमान करते हैं, माना मेरा पन आया ना! मैं और मेरेपन से ही तो अभिमान आना शुरु होता है। तो एक देह-भान, दूसरा देह-अभिमान और तीसरा है देह का लगाव। तो यह तीन स्टेजेज़ हैं। तो अपने को चेक करो। न अपनी विशेषता का अभिमान रखो, न दूसरे की विशेषताओं पर प्रभावित हो जाओ, इसकी सम्भाल रखो।

अंत में यह जो अपने संस्कार हैं, कमज़ोरियां हैं, वही भूत के रूप में अनुभव होते हैं, बाकी भूत आदि कोई ऐसे आते नहीं हैं। समझो आपका किसी में मोह है, तो वह मोह एक भूत के रूप में आयेगा, वह डराता रहेगा, आपको निर्भय बनने नहीं देगा। तो अंतिम समय में ऐसी कोई भी कमी हमारे में रह नहीं जाये, नहीं तो वह कमी ही भूत के रूप में सामने आती है। तो अंत मते सो गति क्या हो जायेगी। अपने देह में भी मोह नहीं होना चाहिए, थोड़ा भी मोह होगा तो भी परेशान हो जायेंगे। इसलिए सूक्ष्म में भी काम अर्थात् कामना वाले संस्कारों का अंश भी न हो क्योंकि अंत समय में वह बहुत फास्ट वार करेंगे, उन्हों को चांस मिलेगा, इतना समय आपने उसका स्थान बनाया, अंत में क्यों जायेगा, लड़ेगा ना। तो अंश मात्र भी यह संस्कार हमारे में न हो, इसके लिए बहुत सूक्ष्म चेकिंग करो- काम, क्रोध, लोभ, मोह और अभिमान इन सभी को देखो। क्रोध नहीं है लेकिन मूड ऑफ हो जाती है। तो सूक्ष्म रूपों को भी चेक करके इसको पूर्ण रूप से खत्म करो। गीता के अठारह अध्यायों का सार दो शब्दों में है ``नष्टोमोहा स्मृति स्वरूप''। हम स्वरूप कहते हैं, वह स्मृतिर्लब्धा कहते हैं। तो अंत के समय के लिए सार रूप में हमारे में सब प्रकार की पवित्रता है? क्योंकि पवित्रता हमारा फाउण्डेशन है। पवित्रता माना कोई भी विकारों का अंश न हो।